UP Board Solutions for Class 10 Sanskrit Chapter 6 आदिशङ्कराचार्यः (गद्य – भारती)

परिचय

आदि शंकराचार्य ‘जगद्गुरु’ के नाम से प्रसिद्ध हैं। ये अद्भुत प्रतिभा के धनी थे। इन्होंने आठ वर्ष की अल्पायु में ही वेद-शास्त्रों का ज्ञान प्राप्त कर लिया था। मात्र 32 वर्ष की पूर्ण आयु में इन्होंने अनेक ग्रन्थों की रचना की, पूरे भारत का भ्रमण किया, विद्वानों से शास्त्रार्थ किये और भारत के चारों दिशाओं में चार पीठों की स्थापना की। जिस समय इनका जन्म हुआ उस समय भारत-भूमि बौद्ध धर्म के विकृत हो चुके स्वरूप से पीड़ित थी। इन्होंने बौद्धों को शास्त्रार्थ में पराजित किया और पुन: वैदिक धर्म की स्थापना की। इन्होंने छठे दर्शन; वेदान्त दर्शन; को अद्वैत दर्शन का रूप प्रदान किया और अपने मत की पुष्टि के लिए उपनिषदों और श्रीमद्भगवद्गीता से प्रमाण प्रस्तुत किये। इन्हें ‘मायावाद’ का जनक माना जाता है। प्रस्तुत पाठ में शंकराचार्य के जन्म और उनके द्वारा किये गये कार्यों पर विस्तार से प्रकाश डाला गया है।

पाठ-सारांश [2006, 07, 08, 09, 10, 11, 12, 13, 14, 15]

परमात्मा के अवतार मान्यता है कि धर्म की हानि होने पर साधुजनों की रक्षा करने और पापियों का विनाश करने के लिए भगवान् भारतभूमि पर किसी-न-किसी महापुरुष के रूप में अवश्य अवतार लेते हैं। जिस प्रकार त्रेता युग में राक्षसों का संहार करने के लिए राम के रूप में, द्वापर युग में कुनृपतियों के विनाश के लिए। कृष्ण के रूप में जन्म धारण किया था, उसी प्रकार कलियुग में भगवान् शिव ने देश में व्याप्त मोह-मालिन्यं को दूर करने और वैदिक धर्म की स्थापना के लिए शंकर के रूप में जन्म लिया।

जन्म एवं वैराग्य शंकर का जन्म मालाबार प्रान्त में पूर्णा नदी के तट पर शलक ग्राम में सन् 788 ई० में हुआ था। इनके पिता का नाम शिवगुरु और माता का नाम सुभद्रा था। इन्होंने 8 वर्ष की आयु में ही समस्त वेद-वेदांगों का ज्ञान प्राप्त कर लिया था। बचपन में ही इनके पिता की मृत्यु हो गयी थी। पूर्वजन्म के संस्कार के कारण संसार को माया से पूर्ण जानकर इनके मन में वैराग्य उत्पन्न हो गया। इनका मन तत्त्व की खोज के लिए लालायित हो गया और इन्होंने संन्यास लेने की इच्छा की। माता के मना करने पर इन्होंने संन्यास नहीं लिया।

संन्यास-ग्रहण एक बार शंकर पूर्णा नदी में स्नान कर रहे थे कि एक शक्तिशाली ग्राह ने इनका पैर पकड़ लिया और तब तक इनके पैर को नहीं छोड़ा, जब तक माता ने इन्हें संन्यास लेने की आज्ञा न दे दी। माता की आज्ञा और ग्राह से मुक्ति पाकर ये योग्य गुरु की खोज में वन-वन भटकते रहे। वन में घूमते हुए एक दिन एक गुफा में बैठे हुए गौड़पाद के शिष्य गोविन्दपाद के पास गये। शंकर की अलौकिक प्रतिभा से प्रभावित होकर गोविन्दपाद ने इन्हें संन्यास की दीक्षा दी और विधिवत् वेदान्त के तत्त्वों का अध्ययन कराया।

भाष्य-रचना वैदिक धर्म के पुनरुद्धार के लिए शंकर गाँव-गाँव और नगर-नगर घूमते हुए अन्ततः काशी पहुंचे। यहाँ उन्होंने व्याससूत्रों, उपनिषदों और श्रीमद्भगवद्गीता के भाष्यों की रचना की।

शास्त्रार्थ में विजय एक दिन शंकर के मन में महान् विद्वान् मण्डन मिश्र से मिलने की इच्छा हुई। मण्डन मिश्र के घर जाकर शंकर ने उनसे शास्त्रार्थ करके उन्हें पराजित किया। बाद में मण्डन मिश्र की पत्नी शारदा के कामशास्त्र के प्रश्नों का उत्तर देकर उसे भी पराजित कर दिया। अन्त में मण्डन मिश्र ने आचार्य शंकर का शिष्यत्व स्वीकार

कर लिया।

वैदिक धर्म का प्रचार प्रयाग में शंकर ने वैदिक धर्म के उद्धार के लिए प्रयत्नशील कुमारिल भट्ट के दर्शन किये। कुमारिल भट्ट ने वैदिक धर्म के कर्मकाण्ड को लेकर सम्प्रदायवादियों को परास्त कर दिया था, लेकिन शंकर ने कर्मकाण्ड की मोक्ष में व्यर्थता प्रतिपादित कर कुमारिल के मत का खण्डन करके ज्ञान की महिमा का प्रतिपादन किया। इन्होंने ज्ञान को ही मोक्ष प्रदायक बताते हुए ज्ञानकाण्ड को ही वेद का सार बताया। इस प्रकार शंकर ने सेतुबन्ध से लेकर कश्मीर तक भ्रमण किया और अपनी अलौकिक प्रतिभा द्वारा विरोधियों को परास्त किया। अन्त में 32 वर्ष की अल्पायु में ही इन्होंने अपना पार्थिव शरीर त्याग दिया।

शंकर के सिद्धान्त शंकर ने महर्षि व्यास प्रणीत ब्रह्मसूत्र पर भाष्य की रचना की और व्यास के मत के आधार पर ही वैदिक धर्म को पुनरुज्जीवित किया। इन्होंने वेद और उपनिषदों के तत्त्व का ही निरूपण किया। इनके मत के अनुसार संसार में सुख-दुःख भोगता हुआ जीव ब्रह्म ही है। मायाजन्य अज्ञान के कारण व्यापक ब्रह्म सुख-दुःख का अनुभव करता है। इन्होंने जीव और ब्रह्म की एकता का प्रतिपादन किया और बताया कि अनेक रूपात्मक सृष्टि का आधार ब्रह्म ही है।

विश्व-बन्धुत्व की भावना शंकर का अद्वैत ब्रह्म विश्व-बन्धुत्व की भावना का मूल है। इस भावना के विकास से राष्ट्रीयता का उदय होता है और जाति, क्षेत्र आदि की संकीर्णता समूल नष्ट हो जाती है। शंकर ने राष्ट्रीय भावना को पुष्ट करने के लिए भारत के चारों कोनों में चार वेदान्त पीठों (शृंगेरी पीठ, गोवर्धन पीठ, ज्योतिष्पीठ और शारदापीठ) की स्थापना की। ये चारों पीठ इस समय राष्ट्र की उन्नति, लोक-कल्याण और वैदिक मत के प्रचार में प्रयत्नशील हैं। शंकर यद्यपि अल्पायु थे, लेकिन उनके कार्य-उत्कृष्ट भाष्यग्रन्थ, अनेक मौलिक ग्रन्थ और उनका अद्वैत सिद्धान्त– हमेशा उनकी याद दिलाते रहेंगे।

गद्यांशों का ससन्दर्भ अनुवाद

(1)
धन्येयं भारतभूमिर्यत्र साधुजनानां परित्राणाय दुष्कृताञ्च विनाशाय सृष्टिस्थितिलयकर्ता परमात्मा स्वमेव कदाचित्, रामः कदाचित् कृष्णश्च भूत्वा आविर्बभूव। त्रेतायुगे रामो धनुर्वृत्वा विपथगामिनां रक्षसां संहारं कृत्वा वर्णाश्रमव्यवस्थामरक्षत्। द्वापरे कृष्णो धर्मध्वंसिनः कुनृपतीन् उत्पाट्य धर्ममत्रायत। सैषा स्थिति यदा कलौ समुत्पन्ना बभूव तदा नीललोहितः भगवान् शिवः शङ्कररूपेण पुनः प्रकटीबभूव। भगवतः शङ्करस्य जन्मकाले वैदिकधर्मस्य ह्रासः अवैदिकस्य प्राबल्यञ्चासीत्। अशोकादि नृपतीनां राजबलमाश्रित्य पण्डितम्मन्याः सम्प्रदायिकाः वेदमूलं धर्मं तिरश्चक्रुः। लोकजीवनमन्धतमिस्रायां तस्यां । मुहर्मुहुर्मुह्यमानं क्षणमपि शर्म न लेभे। तस्यां विषमस्थित भगवान् शङ्करः प्रचण्डभास्कर इव उदियाय, देशव्यापिमोहमालिन्यमुज्झित्वा वैदिकधर्मस्य पुनः प्रतिष्ठां चकार।

धन्येयं भारतभूमि **...** प्राबल्यञ्चासीत्। **[2010]**
भगवतः शङ्करस्य **...** प्रतिष्ठां चकार। **[2010]**

शब्दार्थ परित्राणाय = रक्षा करने के लिए। दुष्कृताम् = पापियों के कदाचित् = कभी। भूत्वा = होकर आविर्बभूव = प्रकट हुए। विपथगामिनां रक्षसाम् = कुमार्ग पर चलने वाले राक्षसों का। कुनृपतीन् = दुष्ट राजाओं को। उत्पाद्य = उखाड़कर। अत्रायत = रक्षा की। कलौ = कलियुग में। शङ्कररूपेण'= शंकराचार्य के रूप में। अवैदिकस्य = अवैदिक धर्म का। प्राबल्यञ्चासीत् = प्रबलता थी। पण्डितम्मन्याः = पण्डित माने जाने वाले। तिरश्चक्रुः = तिरस्कार

https://www.evidyarthi.in/

करते थे। अन्धतमिस्रायाम् = अँधेरी रात्रि में अर्थात् अन्धविश्वासों के अन्धकार में। मुहुर्मुहुर्मुह्यमानम् (मुहुः + मुहुः + मुह्यमानम्) = बार-बार मुग्ध होता हुआ। शर्म = कल्याण, सुख, शान्ति। लेभे = पा रहा था। प्रचण्डभास्करः = प्रचण्ड सूर्य। उदियाय = उदित हुए। उज्झित्वा = छोड़कर, नष्ट करके।

सन्दर्भ प्रस्तुत गद्यांश हमारी पाठ्य-पुस्तक 'संस्कृत' के गद्य-खण्ड 'गद्य-भारती' में संकलित 'आदिशङ्कराचार्यः' शीर्षक पाठ से उद्धृत है।

[संकेत इस पाठ के शेष सभी गद्यांशों के लिए यही सन्दर्भ प्रयुक्त होगा।**]**

प्रसग प्रस्तुत गद्यांश में परमात्मा के राम, कृष्ण, शंकराचार्य आदि के रूप में अवतार लेने और उस समय की भारत की परिस्थिति का वर्णन किया गया है।

अनुवाद यह भारतभूमि धन्य है, जहाँ साधु पुरुषों की रक्षा के लिए और पापियों के विनाश के लिए सृष्टि, स्थिति और प्रलय के करने वाले भगवान् स्वयं ही कभी राम और कभी कृष्ण होकर प्रकट हुए। त्रेतायुग में राम ने धनुष धारण करके कुमार्ग पर चलने वाले राक्षसों को मारकर वर्ण और आश्रम व्यवस्था की रक्षा की। द्वापर में कृष्ण ने धर्म को नष्ट करने वाले दुष्ट राजाओं को उखाड़कर धर्म की रक्षा की। वही स्थिति जब कलियुग में उत्पन्न हुई, तब नील-रक्तवर्ण भगवान् शिव शंकर रूप में फिर से प्रकट हुए। भगवान् शंकर के जन्म के समय वैदिक धर्म की हानि और वेद को न मानने वाले धर्म अर्थात् अवैदिकों की प्रबलता थी। अशोक आदि राजाओं की राजशक्ति का सहारा लेकर स्वयं को पण्डित मानने वाले सम्प्रदाय के लोगों ने वेदमूलक धर्म का तिरस्कार किया। लोक-जीवन (संसार) अन्धविश्वास के अन्धकार पर बार-बार मुग्ध होता हुआ क्षणभर भी सुख को प्राप्त नहीं कर रहा था। उस विषम परिस्थिति में भगवान् शंकर तेजस्वी सूर्य के समान उदित हुए और देश में फैली मोह की मलिनता को नष्ट करके वैदिक धर्म की पुनः स्थापना (प्रतिष्ठा) की।

(2)
शङ्करः केरलप्रदेशे मालावारप्रान्ते पूर्णाख्यायाः नद्यास्तटे स्थिते शलकग्रामे अष्टाशीत्यधिके सप्तशततमे खीष्टाब्दे नम्बूद्रकुले जन्म लेभे। तस्य पितुर्नाम शिवगुरुरासीत् मातुश्च सुभद्रा। शैशवादेव शङ्करः अलौकिकप्रतिभासम्पन्न आसीत्। अष्टवर्षदेशीयः सन्नपि परममेधावी असौ वेदवेदाङ्गेषु प्रावीण्यमवाप। दुर्दैवात् बाल्यकाले एव तस्य पिता श्रीमान् शिवगुरुः पञ्चत्वमवाप। पितृवात्सल्यविरहितः मात्रैव लालितश्चासौ प्राक्तनसंस्कारवशात् जगतः मायामयत्वमाकलय्य तत्त्वसन्धाने मनश्चकार।। प्ररूढवैराग्यप्रभावात् स प्रव्रजितुमियेष, परञ्च परमस्नेहनिर्भरा तदेकतनयाम्बा नानुज्ञां ददौ। लोकरीतिपरः शङ्करः मातुरनुज्ञां विना प्रव्रज्यामङ्गीकर्तुं न शशाक।।

शङ्करः केरलप्रदेशे **..** पञ्चत्वमवाप। **[2009]**

शब्दार्थ पूर्णाख्यायाः = पूर्णा नाम की। अष्टाशीत्यधिके सप्तशततमे = सात सौ अठासी में। नम्बूद्रकुले = नम्बूदरी कुल में। अष्टवर्षदेशीयः = आठ वर्ष के। वेदवेदाङ्गेषु = वेद और वेद के अंगों (शास्त्रों) में। प्रावीण्यमवाप (प्राणीण्यम् + अवाप) = प्रवीणता प्राप्त कर ली। दुर्दैवात् = दुर्भाग्यवश। पञ्चत्वमवाप = मृत्यु को प्राप्त हुए, स्वर्गवासी हो गये। मात्रैव (माता + एव) = माता के द्वारा ही। प्राक्तनसंस्कारवशात् = पुराने संस्कारों के कारण। मायामयत्वमाकलय्य = माया से पूर्ण होना समझकर। तत्त्वसन्धाने = तत्त्वों की खोज में। मनः चकार = विचार बना लिया। प्ररूढवैराग्यप्रभावात् = उत्पन्न हुए वैराग्य के प्रभाव से प्रव्रजितुमियेषु (प्रव्रजितुम् +इयेषु) = संन्यास लेने की इच्छा की। तदेकतनयाम्बा (तद् + एकतनय + अम्बा) = उस एकमात्र पुत्रवती माता ने। नानुज्ञां = आज्ञा नहीं। प्रव्रज्यामङ्गीकर्तुम् (प्रव्रज्याम् + अङ्गीकर्तुम्) = संन्यास लेने के लिए। न शशाक = समर्थ नहीं हो सके।

प्रसंग प्रस्तुत गद्यांश में शंकर के जन्म एवं उनके मन में वैराग्य उत्पन्न होने का
वर्णन किया गया है।

अनुवाद शंकर ने केरल प्रदेश में मालाबार प्रान्त में पूर्णा नाम की नदी के किनारे स्थित शलक ग्राम में सन् 788 ईस्वी में नम्बूदरी कुल में जन्म लिया। उनके पिता का नाम शिवगुरु और माता का नाम सुभद्रा था। बचपन से ही शंकर असाधारण प्रतिभा से सम्पन्न थे। आठ वर्ष की आयु के होते हुए भी ये अत्यन्त मेधावी थे और इन्होंने वेद और वेदांगों में प्रवीणता प्राप्त कर ली थी। दुर्भाग्य से बेचपन में ही उनके पिता श्रीमान् शिवगुरु मृत्यु को प्राप्त हुए। पिता के प्रेम से वियुक्त माता के ही द्वारा पालन किये गये उन्होंने पूर्व जन्म के संस्कार के कारण संसार को माया से पूर्ण जान करके तत्त्व की खोज में (अपमा) मन लगाया। वैराग्य के उत्पन्न होने के कारण उन्होंने संन्यास लेने की इच्छा की, परन्तु अत्यन्त स्नेह से पूर्ण एकमात्र पुत्र वाली माता ने आज्ञा नहीं दी। लोक की रीति पर चलने वाले शंकर माता की आज्ञा के बिना संन्यास स्वीकार करने में समर्थ नहीं हो सके।

(3)
एवं गच्छत्सु दिवसेषु एकदा शङ्करः पूर्णायां सरिति स्नातं गतः। यावत् स सरितोऽन्तः प्रविष्टः तावदेव बलिना ग्राहेण गृहीतः। शङ्करः आसन्नं मृत्युमवेक्ष्य आर्तस्वरेण चुक्रोश। तस्य वत्सला जननी स्वपुत्रस्य स्वरं परिचीय भृशं विललाप। तस्याः तादृशीं विपन्नामवस्थामनुभूय स तस्यै न्यवेदयत्-अम्ब! यदि ते मम जीवितेऽनुरागः स्यात् तर्हि संन्यासाय मामनुजानीह तेनैव मे ग्राहान्मुक्तिर्भविष्यति। अनन्यगतिः माता तथेत्युवाच। सद्यस्तद्ग्राहग्रहात् मुक्तः स संन्यासमालम्ब्य पुत्रविरहसन्तप्तां मातरं सान्त्वयित्वा तया बान्धवैश्चानुज्ञातः यतिवेषधरः स्वजन्मभूमिं त्यक्त्वा देशानटितुं प्रवृत्तः। **[2007, 10]**

एवं गच्छत्सु **...** आर्तस्वरेण चुक्रोश।
एवं गच्छत्सु **...** ग्राहान्मुक्तिर्भविष्यति। **[2006]**

शब्दर्थ सरिति = नदी में स्नातुम् = स्नान के लिए। बलिना = शक्तिशाली। आसन्नं = समीप में आये। मृत्युमवेक्ष्य = मृत्यु को देखकर चुक्रोश = चिल्लाया। परिचीय = पहचानकर। विललाप = रोने लगी। विपन्नामवस्थामनुभूय = दुःखपूर्ण दशा का अनुभव करके। अनुजानीहि = आज्ञा दो। अनन्यगतिः = अन्य उपाय न देखकर। सद्यः = तुरन्त, उसी समय। ग्राहग्रहात् = मगर की पकड़ से। सान्त्वयित्वा = सान्त्वना देकर अटितुं प्रवृत्तः = घूमने लगा।

प्रसंग प्रस्तुत गद्यांश में शंकर को ग्राह द्वारा पकड़े जाने एवं माता द्वारा संन्यास लेने की आज्ञा देने पर उससे मुक्ति का वर्णन किया गया है।

अनुवाद इस प्रकार कुछ दिनों के बीतने पर एक बार शंकर पूर्णा नदी में स्नान करने के लिए गये। ज्यों ही वे नदी के अन्दर प्रविष्ट हुए, त्यों ही शक्तिशाली ग्राह (घड़ियाल) के द्वारा पकड़ लिये गये। मृत्यु को निकट देखकर शंकर दु:ख-भरी आवाज में चिल्लाये। उनकी प्यारी माता अपने पुत्र की आवाज पहचानकर अत्यधिक रोने लगीं। उनकी उस तरह की दु:खी अवस्था का अनुभव करके उन्होंने उससे (माता से) निवेदन किया-हे माता! यदि तुम्हारा मेरे जीवन पर प्रेम है, तो मुझे संन्यास के लिए अनुमति दो। उससे ही मेरी ग्राह से मुक्ति होगी। अन्य उपायरहित माता ने 'अच्छा' ऐसा कहा। उसी समय उस ग्राह की पकड़ से मुक्त हुए उन्होंने संन्यास लेकर पुत्र के विरह से दु:खी माता को धैर्य देकर, उस (माता) के और अन्य बन्धुओं के द्वारा आज्ञा दिये जाने पर साधु का वेश धारण करके अपनी जन्मभूमि को छोड़कर अन्य देशों में भ्रमण के लिए निकल पड़े।

(4)
वनवीथिकासु परिभ्रमन् स क्वचित् गृहान्तर्वर्तिनं गौडपादशिष्यं
गोविन्दापादान्तिकं जगाम। यतिवेषधारिणं तं गोविन्दपादः पप्रच्छ—कोऽसि त्वं

https://www.evidyarthi.in/

भोः? शङ्करः प्राह

मनोबुद्ध्यहङ्कारचित्तानि नाहं श्रोत्रं न जिह्वा न च प्राणनेत्रम्
न च व्योमभूमिर्न तेजो न वायुश्चिदानन्दरूपः शिवोऽहं शिवोऽहम् ॥

एतामलौकिकीं वाचमुपश्रुत्य गोविन्दपादः तमसाधारणं जनं मत्वा तस्मै संन्यासदीक्षां ददौ। गुरोः गोविन्दपादादेव वेदान्ततत्त्वं विधिवदधीत्य स तत्त्वज्ञो बभूव। सृष्टिरहस्यमधिगम्य गुरोराज्ञया स वैदिकधर्मोद्धरणार्थं दिग्विजयाय प्रस्थितः। ग्रामाद ग्रामं नगरान्नगरमटन् विद्वद्भिश्च सह शास्त्रचर्चा कुर्वन् स काशीं प्राप्तः।
काशीवासकाले स व्याससूत्राणामुपनिषदां श्रीमद्भगवद्गीतायाश्च भाष्याणि प्रणीतवान्।

एताम् अलौकिकीं .... भाष्याणि प्रणीतवान् **[2008, 14]**

शब्दार्थ वनवीथिकासु = वन के मार्गों में परिभ्रमन् = घूमते हुए। गुहान्तर्वर्तिनम् (गुहा + अन्तर्वर्तिनम्) = गुफा के अन्दर रहने वाले। अन्तिकं = पास, समीप। जगाम = पहुँच गये। यतिवेषधारिणः = संन्यासी का वेश धारण करने वाले पप्रच्छ = पूछा। वाचम् = वाणी को। उपश्रुत्य = सुनकर। संन्यासदीक्षां = संन्यास धर्म की दीक्षा। अधीत्य = पढ़कर। तत्त्वज्ञः = तत्त्ववेत्ता। अधिगम्य = जानकर। दिग्विजयाय = दिग्विजय के लिए। प्रस्थितः = प्रस्थान किया। प्रणीतवान् = रचना की।

प्रसंग प्रस्तुत गद्यांश में शंकर द्वारा घर त्यागने, गोविन्दपाद के पास जाकर दीक्षा लेने, वेदान्त के तत्त्वों का अच्छी तरह से अध्ययन करने और अनेक भाष्यों की रचना करने का वर्णन किया गया है।

अनुवाद वन के मार्गों में भ्रमण करते हुए वे कहीं पर गुफा के अन्दर रहने वाले, गौड़पाद के शिष्य गोविन्दपाद के पास गये। संन्यासी के वेश को धारण करने वाले उनसे गोविन्दपाद ने पूछा–तुम कौन हो? शंकर बोलेमैं न मन हूँ, न बुद्धि हूँ, न अहंकार हूँ, न चित्त हूँ, न मैं कान हूँ, ने जीभ हूँ, न प्राण हूँ, न नेत्र हूँ, न आकाश हूँ, न भूमि हूँ, न तेज हूँ, न वायु हूँ। मैं चिद् व आनन्दस्वरूप शिव हूँ, शंकर हूँ। इस अलौकिक वाणी को सुनकर गोविन्दपाद ने उन्हें असाधारण मनुष्य समझकर संन्यास की दीक्षा दे दी। गुरु गोविन्दपाद से ही वेदान्त के तत्त्व का विधिपूर्वक अध्ययन करके वे तत्त्वज्ञाता हो गये। सृष्टि के रहस्य को जानकर गुरु की आज्ञा से उन्होंने वैदिक धर्म के उद्धार हेतु दिग्विजय के लिए प्रस्थान किया। गाँव से गाँव में, नगर से नगर में घूमते हुए, विद्वानों के साथ शास्त्रे-चर्चा करते हुए वे काशी पहुँचे। काशी में निवास के समय उन्होंने व्यास सूत्रों, उपनिषदों और श्रीमद्भगवद्गीता के भाष्यों की रचना की।

(5)
अथ कदाचित् काश्यां प्रथितयशसः विद्वद्धौरेयस्य मण्डनमिश्रस्य दर्शनलाभाय
स मनश्चकार। तद्गृहमन्वेष्टुकामः काञ्चिद् धीवरीमपृच्छत् क्वास्ति
मण्डनमिश्रस्य धामेति। सा धीवरी प्रत्यवदत्

स्वतः प्रमाणं परतः प्रमाणं

कीराङ्गना यत्र गिरो गिरन्ति ।

द्वारस्य नीडान्तरसन्निबद्धाः

अवेहि तद्धाम हि मण्डनस्य ॥

इति धीवरीवचनं श्रुत्वा शङ्करः मण्डनमिश्रस्य भवनं गतः। तयोर्मध्ये तत्र शास्त्रार्थोऽभवत्।

स्व तः प्रमाणं .... शास्त्रार्थोऽभवत्। **[2012]**

शब्दार्थ प्रथितयशसः = प्रसिद्ध यश वाले विद्वद्धौरेयस्य = विद्वानों में श्रेष्ठ, अन्वेष्टुकामः = ढूंढने की इच्छा करता हुआ। धाम = घर। कीराङ्गना = मादा तोता। गिरः गिरन्ति = वाणी बोलते हैं। नीडान्तरसन्निबद्धा = घोंसले के अन्दर बैठे हुए। अवेहि = जानो।।

प्रसंग प्रस्तुत गद्यांश में शंकर का काशी में मण्डन मिश्र के साथ शास्त्रार्थ करने का वर्णन है।

अनुवाद इसके बाद उन्होंने (शंकर ने) कभी काशी में प्रसिद्ध यश वाले, विद्वानों में श्रेष्ठ मण्डन मिश्र के दर्शन-लाभ प्राप्त करने की इच्छा की। उनका घर ढूँढ़ने की इच्छा वाले उन्होंने किसी धीवरी (केवट या मल्लाह की स्त्री) से पूछा-"मण्डन मिश्र का घर कहाँ है?" उस धीवरी ने उत्तर दिया-"जहाँ द्वार पर स्थित घोसलों के भीतर पड़े हुए तोता और मैना स्वत: प्रमाण और परत: प्रमाण (शास्त्रीय प्रमाण के रूप में) की वाणी बोलते हैं, वही मण्डन मिश्र को घर समझिए।' इस प्रकार धीवरी के वचन को सुनकर शंकर मण्डन मिश्र के घर गये। वहाँ उन दोनों के मध्य में शास्त्रार्थ हुआ।

(6)
निर्णायकपदे मण्डनमिश्रस्य सुमेधासम्पन्ना भार्या शारदा प्रतिष्ठापितासीत्। शास्त्रार्थे स्वस्वामिनः पराजयमसहमाना सा स्वयं तेन सह शास्त्रार्थं कर्तुं समुद्यताभवत्। सा शङ्करं कामशास्त्रीयान् प्रश्नान् पप्रच्छ| तान् दुरुत्तरान् प्रश्नान् श्रुत्वा स तूष्णीं बभूव। कियत्कालानन्तरं स परकायप्रवेशविद्यया कामशास्त्रज्ञो बभूवे पुनश्च मण्डनपत्नी शास्त्रार्थे पराजितवान्। जनश्रुतिरस्ति यत् स एव मण्डनमिश्रः आचार्यशङ्करस्य शिष्यत्वं स्वीचकार, सुरेश्वर इति नाम्ना प्रसिद्धिं च लेभे। **[2012]**

शब्दार्थ सुमेधासम्पन्ना = बुद्धिसम्पन्न प्रतिष्ठापितासीत् = स्थापित की गयी। असहमाना = सहन न करती हुई। कामशास्त्रीयान् = कामशास्त्र सम्बन्धी दुरुत्तरान् = कठिन उत्तर वाले। तूष्णीम् = मौन, चुप। कियत्कालानन्तरम् = कुछ समय के बाद। परकायप्रवेशविद्यया = दूसरे के शरीर में प्रवेश करने की विद्या से। पराजितवान् = पराजित किया। जनश्रुतिः अस्ति = जनश्रुति है, लोगों द्वारा कहा जाता है।

प्रसंग प्रस्तुत गद्यांश में शंकर द्वारा मण्डन मिश्र और उनकी पत्नी को शास्त्रार्थ में पराजित करने का वर्णन किया गया है।

अनुवाद निर्णायक के पद पर मण्डन मिश्र की अत्यन्त बुद्धिमती पत्नी शारदा बैठायी गयी थी। शास्त्रार्थ में अपने स्वामी की हार को सहन न करती हुई वह स्वयं उनके साथ शास्त्रार्थ करने के लिए तैयार हो गयी। उसने शंकर से कामशास्त्र-सम्बन्धी प्रश्न पूछे। उन कठिन उत्तर वाले प्रश्नों को सुनकर वे चुप हो गये। कुछ समय (दिन या महीने) के पश्चात् दूसरों के शरीर में प्रवेश करने की विद्या से वे कामशास्त्र के ज्ञाता हो गये। और फिर मण्डन मिश्र की पत्नी को शास्त्रार्थ में पराजित किया। यह जनश्रुति है कि उन्हीं मण्डन मिश्र ने आचार्य शंकर की शिष्यता स्वीकार की और 'सुरेश्वर' नाम से प्रसिद्धि को प्राप्त किया।

(7)
दिग्विजययात्राप्रसङ्गेनैव आचार्यप्रवरः प्रयागं प्राप्तः। तत्र वैदिकधर्मोद्धरणाय सततं यतमानं कुमारिलभई ददर्श। एकतः कुमारिलभट्टः वैदिकधर्मस्य कर्मकाण्डपक्षमाश्रित्य साम्प्रदायिकान्। पराजितवान् अपरतश्च श्रीमच्छङ्करः कर्मकाण्डस्य चित्तशुद्धिमात्रपर्यवसायिमाहात्म्यं स्वीकृत्यापि मोक्षे तस्य वैयर्थ्यं प्रतिपादयामास। एवं

https://www.evidyarthi.in/

कुमारिलसम्मतमपि खण्डयित्वा स अज्ञाननिवृत्तये ज्ञानस्य महिमानं ख्यापयामास। तद् ज्ञानमेव मोक्षदायकम् भवति इति ज्ञानकाण्डमेव वेदस्य निष्कृष्टार्थं इति शङ्करः अमन्यत्। एवं शङ्करः आसेतोः कश्मीरपर्यन्तं समग्रदेशे परिबभ्राम, स्वकीययालौकिक्या बुद्धया च न केवलं विरोधिमतं समूलमुत्पाटयामास वरञ्च वैदिकधर्मानुयायिनां मध्ये तत्त्वस्वरूपमुद्दिश्य यद्वैमत्यमासीत् तस्यापि समन्वयः तेन समुपस्थापितः। अल्पीयस्येव वयसि महापुरुषोऽसौ चतुर्दिक्षु स्वकीर्तिकौमुदीं प्रसार्य द्वात्रिंशत्परमायुस्ते केदारखण्डे स्वपार्थिवशरीरं त्यक्त्वा पुनः कैलासवासी बभूव।

दिग्विजययात्राप्रसङ्गेनैव **..** प्रतिपादयामास

शब्दार्थ दिग्विजययात्राप्रसङ्गेनैव = दिग्विजय यात्रा के प्रसंग में ही। वैदिकधर्मोद्धरणाय = वैदिक धर्म के उद्धार के लिए। यतमानं = प्रयत्न करने वाले। एकतः = एक ओर पक्षमाश्रित्य = पक्ष का आश्रय लेकर अपरतश्च = और दूसरी ओर श्रीमच्छङ्करः (श्रीमत् + शंकरः) = श्रीमान् शंकर। चित्तशुद्धिमात्रपर्यवसायि = चित्त की शुद्धिमात्र उद्देश्य वाला। वैयर्थ्यम् = व्यर्थता। प्रतिपादयामास = सिद्ध की। ख्यापयामास = प्रसिद्ध किया। निष्कृष्टार्थम् = निष्कर्ष के लिए। आसेतोः = सेतुबन्ध (रामेश्वरम्) से लेकर परिबभ्राम = भ्रमण किया। उत्पाटयामास = उखाड़ फेंका। तत्त्वस्वरूपमुद्दिश्य = तत्त्व के स्वरूप को समझाकर। यद्वैमत्यमासीत् (यत् + वैमत्यम् + आसीत्) = जो मत-विभिन्नता थी। समुपस्थापितः = उपस्थित किया। अल्पीयसी = थोड़ी-सी। चतुर्दिक्षु = चारों दिशाओं में प्रसार्य = फैलाकर।

प्रसंग प्रस्तुत गद्यांश में शंकर द्वारा कर्मकाण्ड की व्यर्थता और ज्ञान की उपयोगिता सिद्ध की गयी है।

अनुवाद दिग्विजय यात्रा के प्रसंग से ही आचार्य-श्रेष्ठ (शंकर) प्रयाग गये। वहाँ वैदिक धर्म के उद्धार के लिए निरन्तर प्रयत्न करते हुए कुमारिल भट्ट को देखा। एक ओर कुमारिल भट्ट ने वैदिक धर्म के कर्मकाण्ड के पक्ष का सहारा लेकर सम्प्रदायवादियों को पराजित किया और दूसरी ओर श्रीमान् शंकर ने कर्मकाण्ड; चित्त की शुद्धि करने मात्र तक उद्देश्य; की महत्ता स्वीकार करके भी मोक्ष में उसकी व्यर्थता प्रतिपादित की। इस प्रकार कुमारिल के द्वारा मान्य मत का खण्डन करके भी उन्होंने अज्ञान को दूर करने के लिए ज्ञान की महिमा बतायी। "वह ज्ञान ही मोक्ष को देने वाला होता है यह ज्ञानकाण्ड ही वेद का निष्कर्ष है, ऐसा शंकर मानते थे। इस प्रकार शंकर ने सेतुबन्ध (रामेश्वरम्) से लेकर कश्मीर तक सम्पूर्ण देश में भ्रमण किया और अपनी अलौकिक बुद्धि से न केवल विरोधियों के मत को ही समूल नष्ट किया, वरन् वैदिक धर्म के मानने वालों के मध्य में तत्त्व के स्वरूप को लेकर जो मत की भिन्नता थी, उसमें भी उन्होंने समन्वय स्थापित किया। थोड़ी-सी आयु में यह महापुरुष चारों दिशाओं में अपनी कीर्ति फैलाकर 32 वर्ष की आयु में केदारखण्ड में अपने पार्थिव शरीर को छोड़कर पुनः कैलाशवासी हो गये।

(8)
शङ्कराविर्भावात् प्रागपि तत्रासन् व्यासवाल्मीकिप्रभृतयो बहवो मनीषिणः ये स्वप्रज्ञावैशारद्येन वैदिकधर्माभ्युदयाय प्रयतमाना आसन्। तेषु महर्षिव्यास-प्रणीतानि ब्रह्मसूत्राण्यधिकृत्य श्रीमच्छङ्करेण शारीरकाख्यं भाष्यं प्रणीतम्। एवं व्यासमतमेवावलम्ब्य भाष्यकृता तेन वैदिकधर्मः पुनरुज्जीवितः। तस्य दार्शनिक मतमद्वैतमतमिति लोके प्रसिद्धमस्ति। स स्वयं प्रतिज्ञानीते यत् वेदोपनिषत्सु सन्निहितं तत्त्वस्वरूपमेव स निरूपयति नास्ति तत्र किञ्चित् तदबुद्धिसमुद्भवम्। तन्मतेन जगदतीतं सत्यं ज्ञानमनन्तं यत्तदेव ब्रह्म इति बोद्धव्यम्। ब्रह्माधिष्ठाय मायाविकारः एव एष संसारः अस्ति। संसारसरणौ सुखदुःखप्रवाहे उत्पीड्यमानो जीवो ब्रह्मैवास्ति। विभूर्भूत्वापि मायाजन्याज्ञानप्रभावात् स आत्मनः कार्पण्यमनुभवति सन्ततं विषीदति च। एवं जीवब्रह्मैक्यं प्रतिपाद्य स सकलजीवसाम्यं स्थापयामास। "एकं सद् विप्रा बहुधा वदन्ति, नेह नानास्ति किञ्चन, यो वै भूमा तत्सुखम्" इति श्रुतीः अनुसृत्य शङ्करः वेदान्ततत्त्वस्वरूपं निर्धारयामास।

ब्रह्माधिष्ठाय मायाविकारः **...** निर्धारयायास **[2009]**

शब्दार्थ शङ्कराविर्भावात् = शंकर के जन्म लेने से। प्रागपि = पहले भी। मनीषिणः = विद्वान्। वैशारद्येन = निपुणता से। अभ्युदयाय = उन्नति के लिए। शारीरकाख्यम् = शारीरिक नाम वाला। व्यासमतमेवावलम्ब्य = व्यास के मत का सहारा लेकर ही प्रतिजानीते = घोषित करते हैं। सन्निहितं = छिपा हुआ है, निहित है। बुद्धिसमुद्भवम् = बुद्धि से उत्पन्न। जगदतीतं = संसार से परे, संसार से भिन्न। बोद्धव्यम् = जानना चाहिए। ब्रह्माधिष्ठाय = ब्रह्म का अधिष्ठान करके। संसार-सरणौ = संसाररूपी मार्ग पर। उत्पीड्यमानः = दुःखी होता हुआ। विभुर्भूत्वापि = व्यापक होकर भी। मायाजन्याज्ञानप्रभावात् = माया से उत्पन्न अज्ञान के प्रभाव से। कार्पण्यम् = दीनता का विषीदति = दुःखी होता है। विप्रा = विद्वान्। नेह = यहाँ पर नहीं। भूमा = अधिकता।

प्रसंग प्रस्तुत गद्यांश में शंकर द्वारा प्रतिपादित वैदिक सिद्धान्तों का संक्षिप्त वर्णन करके उनको समझाया गया है।

अनुवाद शंकर के जन्म से पूर्व भी व्यास, वाल्मीकि जैसे बहुत-से विद्वान् थे, जो अपनी बुद्धि की निपुणता से वैदिक धर्म की उन्नति के लिए प्रयत्न कर रहे थे। उनमें महर्षि व्यास के द्वारा रचित ब्रह्मसूत्रों के आधार पर श्रीमान् शंकर ने शारीरक' नाम का भाष्य रचा। इस प्रकार व्यास के मत का सहारा लेकर ही उस भाष्यकार ने वैदिक धर्म को पुनरुज्जीवित किया। उनका दार्शनिक मत 'अद्वैत' इस नाम से संसार में प्रसिद्ध है। वे स्वयं घोषित करते हैं कि वेद और उपनिषदों में सन्निहित तत्त्व के स्वरूप का ही वे वर्णन कर रहे हैं, उसमें कुछ भी उनकी बुद्धि से उत्पन्न नहीं है। उनके मत के अनुसार जो संसार से अतीत और सत्य है, अनन्त ज्ञान है, वही ब्रह्म है, ऐसा समझना चाहिए। ब्रह्म का आश्रय लेकर माया से उत्पन्न ही यह संसार है। संसार के मार्ग में सुख और दु:ख के प्रवाह में पीड़ित हुआ जीव ब्रह्म ही है। व्यापक होकर भी माया से उत्पन्न अज्ञान के प्रभाव से वह आत्मा की दीनता का ही अनुभव करता है और निरन्तर दु:खी रहता है। इस प्रकार जीव और ब्रह्म की एकता का प्रतिपादन करके उन्होंने सम्पूर्ण जीवों की समानता स्थापित की। "एक ही ब्रह्म सर्वशक्तिमान् है, इस तत्त्व को ब्राह्मण अनेक प्रकार से कहते हैं, इस संसार में कुछ भी भिन्न नहीं है। जो भूमा है, वही सुख है।" इस प्रकार वेदों का अनुसरण करके शंकर ने तत्त्व के स्वरूप को निर्धारित किया।

(9)
प्रतीयमानानेकरूपायाः सृष्टेः अधिष्ठानं ब्रह्म अद्वैतरूपमस्ति। एतदस्ति विश्वबन्धुत्व भावनायाः बीजम् । अस्याः भावनायाः पल्लवनेन न केवलं एकः राष्ट्रवृक्षः संवर्धते, अपितु जातिक्षेत्रादिमूला उच्चावचभावरूपा सङ्कीर्णता समूलोच्छिन्ना भवति। एतस्याः राष्ट्रियभावनायाः पुष्ट्यर्थं स स्वदेशस्य चतसृषु दिक्षु चतुर्णा वेदान्तपीठान स्थापनाञ्चकार। मैसूरप्रदेशे शृङ्गेरीपीठं, पुर्यां गोवर्धनपीठे, बदरिकाश्रमे ज्योतिष्पीठं, द्वारिकायाञ्च शारदापीठं साम्प्रतमपि राष्ट्रसमुन्नत्यै, लोकहितसाधनाय चाद्वैतमतस्य प्रचारे अहर्निशं प्रयतमानानि सन्ति। **[2014]**

प्रतीयमानानेकरूपायाः **...** स्थापनाञ्चकार। **[2009]**

शब्दार्थ प्रतीयमान = आभासित, कल्पित, दिखाई देती हुई। अधिष्ठानम् = आधार, स्थान। ब्रह्म अद्वैतरूपम् = ब्रह्म अद्वैत अर्थात् एक रूप है। बीजम् = मूल। उच्चावच = ऊँच-नीच। समूलोच्छिन्ना = जड़ से उखड़ी हुई। चतसृषु दिक्षु = चारों दिशाओं में। साम्प्रतमपि = इस समय भी। अहर्निशम् = दिन-रात।

प्रसंग प्रस्तुत गद्यांश में शंकर के द्वारा अद्वैतवाद सम्बन्धी प्रचार एवं राष्ट्रीय भावना के लिए चार वेदान्त पीठों की स्थापना के उद्देश्य के विषय में बताया गया है।

https://www.evidyarthi.in/

अनुवाद, आभासित होती हुई, अनेक स्वरूप धारण करती हुई सृष्टि का आश्रयभूत ब्रह्म अद्वैत रूप है। यह विश्व-बन्धुत्व की भावना का मूल है। इस भावना के प्रसार से केवल एक राष्ट्ररूपी वृक्ष ही नहीं बढ़ता है, अपितु जातिमूलक और स्थानमूलक ऊँच-नीच की भावना की संकीर्णता जड़ से नष्ट हो जाती है। इस राष्ट्रीय भावना की पुष्टि के लिए उन्होंने अपने देश की चारों दिशाओं में चार वेदपीठों की स्थापना की। मैसूर प्रदेश में शृंगेरीपीठ, पुरी में गोवर्धनपीठ, बदरिकाश्रम में ज्योतिष्पीठ और द्वारका में शारदापीठ अब भी राष्ट्र की उन्नति के लिए और संसार का कल्याण करने के लिए अद्वैत मत के प्रचार में दिन-रात प्रयत्नशील हैं।

(10)

निष्कामकर्मयोगी शङ्करः यद्यपि अल्पायुरासीत् किन्तु तस्य कार्याणि,
अत्युत्कृष्टभाष्यग्रन्थाः, अनेके मौलिकग्रन्थाः अद्वैतसिद्धान्तश्चैनम् अनुक्षणं
स्मारयन्ति। धन्यः खल्वसौ महनीयकीर्तिः जगदगुरुः भगवान् शङ्करः।

शब्दार्थ अल्पायुरासीत् = थोड़ी आयु वाले। अनुक्षणम् = प्रतिक्षण। स्मारयन्ति = याद कराते हैं।

प्रसंग प्रस्तुत गद्यांश में शंकर की विशेषता का वर्णन किया गया है।

अनुवाद निष्काम कर्मयोगी शंकर यद्यपि कम आयु के ही थे, किन्तु उनके कार्य अत्यन्त उत्तम भाष्य-ग्रन्थ (टीकाएँ), अनेक मौलिक ग्रन्थ और अद्वैत सिद्धान्त इनकी प्रत्येक क्षण याद दिलाते हैं। वे (पूजनीय) महान् कीर्तिशाली जगद्गुरु भगवान् शंकर निश्चय ही धन्य हैं।

लघु उत्तरीयप्रश्न

प्रश्न 1.
शंकराचार्य का जन्म कब और कहाँ हुआ था? इनके माता-पिता का नाम भी बताइए।
या
शंकराचार्य के जन्म-वंशादि का उल्लेख कीजिए। **[2010]**
या
आदि शंकराचार्य का जन्म-स्थान लिखिए। **[2007,08, 09, 13, 14]**
या
आदि शंकराचार्य का जन्म किस प्रदेश में हुआ था? **[2007,09]**
या
आदि शंकराचार्य के माता-पिता और ग्राम का नाम लिखिए। **[2010, 14]**
उत्तर :
आदि शंकराचार्य का जन्म केरले प्रदेश के मालाबार प्रान्त में पूर्णा नदी के तट पर स्थित शलक ग्राम में सन् 788 ईस्वी में नम्बूदरी कुल में हुआ था। इनके पिता का नाम शिवगुरु और माता का नाम सुभद्रा देवी था। 991 2 आचार्य शंकर क्यों प्रसिद्ध हैं? स्पष्ट कीजिए। उत्तर 'ब्रह्म अद्वैतस्वरूप है।' आदि शंकराचार्य को यह सिद्धान्त विश्वबन्धुत्व की भावना का मूलाधार है। यह सिद्धान्त क्षेत्रवाद, जातिवाद और ऊँच-नीच की भावनाओं को नष्ट करने वाला है। अज्ञानान्धकार को दूर करने के लिए आचार्य शंकर ने चार वेदान्तपीठों की स्थापना की तथा व्यास सूत्र, उपनिषदों, भगवद्गीता पर सुन्दर भाष्य लिखे, जो निरन्तर गिरते जीवन-मूल्यों के उत्थान में आज भी सहायक हैं। इसलिए आचार्य शंकर जगत् में प्रसिद्ध हैं।

प्रश्न 3.
गोविन्दपाद ने शंकर से क्या पूछा और शंकर ने क्या उत्तर दिया?
उत्तर :
यति वेश को धारण करने वाले गोविन्दपाद ने शंकर से पूछा "तुम कौन हो?' शंकर बोले-"मैं न मन हूँ, न बुद्धि हूँ, न अहंकार हूँ, न चित्त हूँ, न कान हूँ, न जीभ हूँ, न प्राण हूँ, न नेत्र हूँ, न आकाश हूँ, न भूमि हूँ, न तेज हूँ, न वायु हूँ। मैं चिद् व आन्दस्वरूप शिव हूँ, शंकर हूँ।".

प्रश्न 4.
आदि शंकराचार्य ने चार वेदपीठों की स्थापना कहाँ-कहाँ की और क्यों की ?
या
शंकराचार्य द्वारा स्थापित वेदान्तपीठों के नाम लिखिए। **[2006,08,09, 10, 12]**
उत्तर :
आचार्य शंकर ने जातिमूलक और स्थानमूलक ऊँच-नीच की संकीर्णता को जड़ से नष्ट करने और राष्ट्रीय भावना की पुष्टि के लिए देश के चारों दिशाओं में चार वेदपीठों-मैसूर प्रदेश में श्रृंगेरीपीठ, पुरी में गोवर्धनपीठ, बदरिकाश्रम में ज्योतिष्पीठ और द्वारका में शारदा पीठ की स्थापना की।

प्रश्न 5.
शंकराचार्य के संन्यास-ग्रहण की घटना का वर्णन कीजिए।
उत्तर :
एक बार शंकर पूर्णा नदी में स्नान कर रहे थे कि एक शक्तिशाली ग्राह ने इनका पैर पकड़ लिया। ग्राह ने इन्हें तब तक नहीं छोड़ा, जब तक माता ने इन्हें संन्यास लेने की आज्ञा न दे दी। माता की आज्ञा और ग्राह से मुक्ति पाकर इन्होंने संन्यास ले लिया।

प्रश्न 6.
शंकराचार्य ने काशी में किन-किन ग्रन्थों का भाष्य लिखा और किससे शास्त्रार्थ करके पराजित **[2009]**
या
शंकराचार्य ने किन-किन ग्रन्थों के भाष्य लिखे? **[2006, 08,09, 11]**
उत्तर :
शंकराचार्य ने व्यास-सूत्रों, उपनिषदों और श्रीमद्भगवद्गीता के भाष्यों की काशी में रचना की। इन्होंने काशी में मण्डन मिश्र को शास्त्रार्थ में पराजित किया, लेकिन उनकी पत्नी से शास्त्रार्थ में, प्रथम बार, पराजित हुए। कालान्तर में मण्डन मिश्र की पत्नी को भी शास्त्रार्थ में पराजित किया।

प्रश्न 7.
स्वतः प्रमाणं परत: प्रमाणं, कीराङ्गना यत्र गिरो गिरन्ति ।
द्वारस्थनीडान्तरसन्निरुद्धाः, अवेहि तधाम हि मण्डनस्य ॥
उपरिलिखित श्लोक किसने, किससे और क्यों कहा?
उत्तर :
ऊपर उल्लिखित श्लोक धीवरी ने शंकराचार्य से कहा क्योंकि शंकराचार्य ने उससे मण्डन मिश्र के घर का पता पूछा था। हुए?,

https://www.evidyarthi.in/

प्रश्न 8.
आदि शंकराचार्य का जीवन-परिचय संक्षेप में लिखिए। **[2010]**
उत्तर :
शंकराचार्य का जन्म मालाबार प्रान्त में पूर्णा नदी के तट पर शलक नामक ग्राम में सन् 788 ईस्वी में हुआ था। इनके पिता का नाम शिवगुरु और माता का नाम सुभद्रा था। इन्होंने आठ वर्ष की आयु में ही समस्त वेद-वेदांगों का ज्ञान प्राप्त कर लिया था। इनके पिता की मृत्यु बचपन में ही हो गयी थी। पूर्णा नदी में स्नान करते समय एक शक्तिशाली ग्राह ने इनके पैर को पकड़ लिया और तब तक नहीं छोड़ा, जब तक माता ने संन्यास की अनुमति न दे दी। गौड़पाद के शिष्य गोविन्दपाद ने इन्हें संन्यास की दीक्षा दी और वेदान्त-तत्त्वों का अध्ययन कराया। इन्होंने काशी में मण्डन मिश्र व उनकी पत्नी तथा प्रयाग में कुमारिल भट्ट को शास्त्रार्थ में पराजित किया। इन्होंने व्यास-सूत्रों, उपनिषदों और श्रीमद्भगवद्गीता के भाष्यों की रचना की तथा राष्ट्रीय भावना को पुष्ट करने के लिए भारत के चारों कोनों में चार वेदान्तपीठों की स्थापना की। मात्र 32 वर्ष की अल्पायु में ही इन्होंने अपने पार्थिव शरीर का त्याग कर दिया।

प्रश्न 9.
वह महान् कर्मयोगी कौन थे, जिन्होंने वैदिक धर्म की पुनः स्थापना करायी?
[2010, 11]
उत्तर :
आदि शंकराचार्य ही वह महान् कर्मयोगी थे, जिन्होंने वैदिक धर्म की पुन: स्थापना करायी।

प्रश्न 10.
शंकर ने किससे संन्यास-दीक्षा ली एवं वेदान्त-तत्त्व का ज्ञान प्राप्त किया? **[2006]**
उत्तर :
शंकर ने गौड़पाद के शिष्य गोविन्दपाद से संन्यास-दीक्षा ली और वेदान्त-तत्त्व का ज्ञान प्राप्त किया।